कुछ मित्र चाहते हैं कि हम राष्ट्रमंडल छोड़ दें---किन्तु प्रश्न यह है क्या इससे कोई बात हल हो जायेगी । क्या हमें इससे कुछ लाभ होगा ? आचार्य कृपालानी ने बर्मा का उदाहरण दिया । राष्ट्रमंडल से निकल जाने के कारण बर्मा को कोई कठिनाई नहीं हुई---किन्तु वहां की स्थिति बर्मा वाले ही अच्छी तरह जानते हैं---उन्हें दक्षिण से कम्युनिस्टों के घुस आने का भय है---हर जगह चीनी मौजूद हैं। ऐसी स्थिति में वे स्वयं अपने हालात समझ सकते हैं।

श्री ही० ना० मुकर्जी ने कहा है कि क्रान्ति के लिये लाखों लोगों को नष्ट करना आवश्यक है। यदि ये लोग हमारे देश में रहें और एक कठपुतली सरकार की स्थापना के लिये रूसी सहायता की मांग करते रहें और फलस्वरूप रूसी सेनायें हमारे देश में आ गईं तो यह अच्छी बात न होगी। हम वैसी क्रान्ति नहीं चाहते हैं, जैसी क्रान्ति वह चाहते हैं। हमें उसके बिना ही शान्ति से रहने देना चाहिये।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू :** उपाध्यक्ष महोदय, हमारी नीति के सम्बन्ध में और विशेष रूप से पिछले कुछ सप्ताहों के दौरान हमारी सरकार द्वारा जो नीति अपनायी गई उसके सम्बन्ध में जो बहुत से सद्भावना के शब्द कहे गये हैं उनके लिये मैं सदन का आभारी हूं।

जब मैंने अपने प्रस्ताव पर भाषण दिया था तो मैंने स्थिति की गम्भीरता की ओर संकेत किया था और उस पर कुछ ज़ोर दिया था। यह गम्भीरता केवल इस कारण नहीं है कि यह युद्ध और शान्ति का प्रश्न है बल्कि इसलिये है कि इसमें बहुत सी गहरी समस्यायें अर्न्तग्रस्त हैं और मैंने सभा से उन समस्याओं पर इस प्रसंग में विचार करने की अपील की थी।

कुछ माननीय सदस्यों ने, कुछ बार, कुछ हल्केपन से बातें कहीं हैं जैसे कि यह मामला हंसी मजाक का हो। कुछ ने पुराने संसार के चित्रमय ढंग से भाषण दिया है, जैसा कि वे प्राय: बोलते हैं, और उसका आज के तथ्यों से कोई सम्बन्ध नहीं है। मुझे याद दिलाया गया कि प्रथम बातों को हमें पहिले लेना चाहिये। मैं भी कहता हूं, जी हाँ। प्रथम बातों को पहिले लेन चाहिये। परन्तु मेरी कठिनाई यह है कि बहुत से माननीय सदस्य प्रथम बातों को अपने सामने पहिले नहीं रखते हैं, बल्कि वे ९वीं, १०वीं, ५०वीं और १००वीं बातों को रखते हैं। विचारधारा की जिस लीक में वे धंसे रहे हैं वे उससे कभी बाहिर नहीं निकलते हैं। श्री कामत ने अस्पष्ट रूप से यह कहा कि वे लोकतन्त्रात्मक समाजवाद के एक निडर नए संसार की स्थापना करने जा रहे हैं। इस कार्य में मैं उनके लिये शुभकामनायें प्रकट करता हूं। हाल ही में क्या हुआ है ? इंग्लैण्ड जैसा देश जो अपने लोकतन्त्रवाद पर गर्व करता था उसने लोकतन्त्रवाद की धज्जियां उड़ा दी हैं। फ्रांस जैसा देश, जिसका एक बड़ा समाजवादी दल है, अल्जीरिया में जो कुछ हो रहा है उसका समर्थन करने के अतिरिक्त मिस्र के इस आक्रमण का समर्थन करता है। मैं यह जानना चाहूंगा कि इस सम्बन्ध में समाजवाद और समाजवादी दल की स्थिति क्या है।

जहां तक साम्यवाद का सम्बन्ध है, इस सैनिक कार्यवाही को छोड़ कर जिसमें वह निरत हुआ है, जैसा कि मैंने पहिले कहा था, इसने कुछ ऐसी बातें की हैं जिन्होंने बहुत से साम्यवादियों के गहरे विश्वास की जड़ें उखाड़ दी हैं, इसलिये आप धारणाओं के इस उखड़ने को और उन लोगों के मन के गम्भीर संकट को देख रहे हैं जो यह सोचते हैं कि उन्हें किसी बात का समझाना असम्भव है---निःसन्देह वे ऐसे लोग हैं जो पुरानी सर्वविदित बातें आदि दोहराते हैं। भौतिक संसार के गहरे संकट को छोड़ कर जो युद्ध की ओर ले जा सकता है, सभी जगह मन का यह गहरा संकट विद्यमान है।

श्री अशोक मेहता जैसे माननीय सदस्यों द्वारा हमसे पूछा गया है कि हमने अल्जीरिया में क्या किया है, साइप्रेस में क्या किया है या इससे पहिले आपने इजराइल में क्या किया है। उन्होंने यह ऐसे ढंग से पूछा है जैसे कि भारत सरकार समस्त विश्व का एक प्रकार से मालिक हो जो उसे आदेश देता है

†मूल अंग्रेजी में ।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]
और कहता है कि यह करो और वह करो या जैसे कि वैकल्पिक रूप से भारत सरकार माननीय सदस्य के दल की भांति एक प्रकार की वाद-विवाद सभा है जो मिल बैठती है, संकल्प स्वीकार करती है और फिर बिना किसी उत्तरदायित्व के आराम से सो जाती है। हमारी सरकार एक उत्तरदायी सरकार है, वह देश के प्रति उत्तरदायी है और संसद् को उत्तरदायी है। एक गम्भीर संकट के सम्बन्ध में हमें एक उत्तरदायी ढंग से बात करनी होती है। और पहिली बात युद्ध को रोकना है और लोकतन्त्रवाद, साम्यवाद, स्वतन्त्रता या किसी अन्य बात की ज़ोरदार शब्दों में बात करना नहीं है, क्योंकि यदि युद्ध छिड़ता है तो वे सभी बातें समाप्त हो जाती हैं। यदि युद्ध हो तो कोई लोकतन्त्रवाद नहीं रहता है, कोई स्वतन्त्रता नहीं रहती है अर्थात् किसी प्रकार की वांछनीय बात नहीं रहती है। यह मुख्य बात है।

माननीय सदस्य कहते हैं, आप क्यों नहीं जाते और ऐसा क्यों नहीं करते ? इसका कारण यह है कि हम सर्वप्रथम हर एक बात को परखते हैं कि क्या इससे स्थिति में सुधार होगा या अधिक कठिन स्थिति उत्पन्न होगी और कहीं वह बात युद्ध की ओर ले नहीं जायेगी। यह वह पहिली बात है जिसे हम देखते हैं। इसका यह अर्थ नहीं कि हम किसी सिद्धान्त का परित्याग करते हैं। लेकिन कोई भी व्यक्ति, चाहे अवसर उपयुक्त हो या न हो, चिल्ला-चिल्ला कर सिद्धान्तों का ढिंढोरा नहीं पीटता है। कोई भी व्यक्ति केवल इसी कारण संसार की सभी बुराइयों की चर्चा नहीं करता कि उसे वे पसन्द नहीं हैं।

स्वयं भारत में सैंकड़ों बुराइयां हैं। हम उन्हें जानते हैं और उसके लिये हमारी आलोचना की जाती है और हम उनकी चर्चा भी करते हैं। परन्तु एक दम ही हम उन्हें दूर नहीं कर सकते हैं। इससे पहिले कि हम उनका धीरें-धीरे क्रमशः निवारण कर सकें हमें एक विशिष्ट प्रक्रिया अपनानी होती है और कठिन परिश्रम करना होता है। यदि हम ऐसा स्वयं अपने ही देश में नहीं कर सकते हैं तो समस्त संसार में हम उसे कैसे कर सकते हैं ?

हम जिस राजनीतिक और सैनिक संकट को देख रहे हैं उसके अतिरिक्त भी यदि हम संसार को देखें तो मैं कहूंगा कि यह एक बहुत ही साधारण बात है—हम एक पुराने संसार से नए संसार में भारी संक्रमण की कालावधि देखेंगे। क्या यह नये संसार की ओर ले जाने में सफल होगी, यह मैं नहीं कह सकता परन्तु यह स्पष्ट है—चाहे यह राजनीतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक, अणुबम है—कि यह विशाल संक्रमण की कालावधि है और यही वह समय है कि हमारा दिमाग भी इस समय के अनुसार कुछ आगे बढ़े और इस सम्बन्ध में सोचें। इस समय पुरानी सभ्यता बदल रही है। मैं प्राचीन सभ्यता की बात नहीं कर रहा हूं, अब मेरा पुरानी सभ्यता से अभिप्राय वर्तमान सभ्यता है जो आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक रूप से अच्छी या बुरी दिशा में बदल रही है। परन्तु तथ्य यह है कि यह बदल रही है।

उदाहरणार्थ आप अमेरिका को लीजिये जिसे पूंजीवाद में अत्याधिक धंसा हुआ देश कहा जाता है। सभी इस बात को जानते हैं कि आज अमेरिका पूंजीवादी देश है। परन्तु अमेरिका में आज का पूंजीवाद ५० वर्ष पहिले के पूंजीवाद से कहीं विभिन्न है। वह अधिकाधिक समाजवादी रूप ग्रहण करता जा रहा है। वह एक विशिष्ट दिशा की ओर अग्रसर है क्योंकि वर्तमान संसार की समस्त प्रवृत्ति एक विशिष्ट दिशा में है। यह कहने का कोई लाभ नहीं है कि मुझे यह पसन्द नहीं है। हो सकता है कि मुझे रूस में या इंग्लण्ड में विद्यमान कुछ बातें पसन्द न हों। परन्तु हमें इन बातों की ओर इस खंड या इस गुट में बैठे बिना उद्देश्यात्मक दृष्टि से देखना होगा। सर्वप्रथम स्वयं अपने लिये उनसे अनुभव प्राप्त करने का प्रयत्न कीजिये। हमें सोचना चाहिये कि स्वयं अपने देश में क्या करना है ?

दूसरे जहां कहीं भी हमें अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में कार्य करना है, हमें इस देश या उस देश की निन्दा नहीं करनी है बल्कि शान्तिदायक ढंग से, सभ्यता से और मैत्री भाव से कार्य करना है और अपने दृष्टिकोण को प्रस्तुत करना है। हमें कुछ बार एक ऐसा विचार भी अभिव्यक्त करना है जो निन्दा करने के ही

लगभग है और हमारे लिये यह मजबूरी है। परन्तु प्रश्न यह है कि प्राचीन तथा नवीन में एक संघर्ष है। प्रत्येक देश में कुछ ऐसा है जो प्रकट हो कर सामने आ रहा है। सम्भवतः एक प्रकार से हम अमेरिका में प्रौद्योगिकीय संसार में इस बात का एक सब से अधिक उन्नत प्रतिरूप देखते हैं। रूस में यह कुछ विभिन्न है परन्तु फिर भी प्रत्येक एक विशिष्ट प्रतिरूप का प्रतिनिधित्व करता है। हम उन्हें किसी न किसी रूप में देखते हैं और केवल किसी रूप में ही नहीं बल्कि युद्ध और संघर्ष की विचारधारा सम्बन्धी बहुत सी कठिनाई के साथ देखते हैं और फिर भी हम देखते हैं कि दोनों एक नए समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं, सम्भवतः दूसरा देश इसका अधिक प्रतिनिधित्व करता है। यह हमारे लिये अच्छा भी हो सकता है या हमारे लिये बुरा भी हो सकता है। यदि आप में से कोई रूस संघ में गये हों तो आप वहां इस नई सभ्यता को विकसित होते हुए देखेंगे। वहां बुराई भी बहुत है और फिर भी यह नई सभ्यता विकास कर रही है और अपनी जंजीरों को तोड़ने का प्रयत्न कर रही है।

इसका रुचिकर तथा आकर्षक पहलू यह है कि वह धीरे-धीरे अपनी जंजीरों को तोड़ रही थी। हो सकता है वह सफल न हो और कुछ और बात बीच में आ जाये। परन्तु क्या मैं इतना शक्तिशाली या नासमझ हूं कि अमेरिका, रूस, इंग्लैण्ड की इस कारण निन्दा करता फिरूं कि मुझे उनकी कोई विशेष बात पसन्द नहीं है और मैं अपने आपको लोकतन्त्रवाद और समाजवाद और शेष सभी गुणों में, जो किसी देश या व्यक्ति में हो सकते हैं, परिपूर्णता की एक अन्तिम प्रतिमा समझता हूं ?

कई बार लोग हम पर अभियोग लगाते हैं और कहते हैं "ओह, आप बहुत प्रकृष्ट बनने का प्रयत्न कर रहे हैं, या जैसा कि कहावत है 'जितने पावन हो उससे अधिक पावन' बनने का प्रयत्न कर रहे हो"। हम अपनी अपूर्णताओं को अच्छी तरह से जानते हैं और अपूर्णतायें अन्य देशों की अपूर्णताओं से बड़ी हैं। हमें उनसे भयभीत नहीं होना चाहिये क्योंकि यदि हम इस तथ्य को स्वीकार नहीं करते तो हम कभी विकास नहीं कर सकते और हम अभी विकास नहीं करेंगे। दूसरे देश हम से कई प्रकार से आध्यात्मिक दृष्टिकोण से कहीं अधिक ऊंचे हैं और हम भी कुछ प्रकार से बड़े हो सकते हैं। परन्तु मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि हमें यह बात पसन्द नहीं है कि हम सन्तुष्ट भाव से बैठे रहें और फिर यह सोचते रहें कि हम यद्यपि भौतिक रूप से बड़े नहीं हैं तथापि हम आध्यात्मिक रूप से बड़े हैं और चाहे हम निर्धन ही हैं। परन्तु यदि हम वास्तव में आध्यात्मिक रूप से विकास करते हैं तो भौतिक बातों का कोई महत्व नहीं होता है। क्योंकि हम ठीक अर्थों में आध्यात्मिक रूप से बड़े नहीं हैं इसलिये यही कारण है कि हम दूसरों में कोई ऐसी बात देखते हैं जिसकी हम निन्दा करते हैं या आलोचना करते हैं।

हम कभी-कभी अपनी राय प्रकट करने का साहस करते हैं, ठीक है, हम अपना विचार प्रकट करते हैं। और क्यों करते हैं ? इसके दो कारण हैं : पहला कारण यह है कि प्रत्येक व्यक्ति की भांति प्रत्येक देश को यह अधिकार है कि वह अपना विचार प्रकट करे और विचारों कीप्रवाह में से कुछ बार सत्यता निकल आती है। दूसरा कारण यह है कि हमारी स्थिति ऐसी है---और यह हमारा एक सद्गुण है---कि हम इस देश या उस देश की घृणा से नहीं भरे हैं, और यदि कोई देश घृणा और भय से भरा हो तब उसका मस्तिष्क अटक जाता है। वह स्पष्ट रूप से कुछ नहीं सोच सकता है। मैं पूर्ण विनम्रता से यह कहता हूं कि अमेरिका में रूस के बारे में बिल्कुल वैसे ही स्पष्ट विचारधारा नहीं है जैसे कि अमेरिका के बारे में रूस में स्पष्ट विचारधारा नहीं है। कारण यह है कि दोनों के मन कोष से सटे पड़े हैं, एक दूसरे से भय और घृणा से भरे हुए हैं। स्वाभाविकतः परिणाम यह है कि सोचना विचारना बिल्कुल ही रुक गया है। मैं यह नहीं कहता कि स्थायी रूप से यह रुकावट उत्पन्न हो गई है परन्तु मैं एक अस्थायी प्रावस्था की बात कह रहा हूं। मुझे रत्ती भर भी संदेह नहीं है कि यदि वे एक दूसरे को और अधिक समझ लें---इससे कुछ अन्तर नहीं पड़ता कि वे सहमत होते हैं या नहीं और सम्भवतः वे बहुत सी बातों में सहमत भी नहीं होंगे---तो घृणा और मिथ्या धारणायें दूर हो जायेंगी और वे अन्य किसी बात के अतिरिक्त इस

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

एक बात को अधिक समझने लगेंगे कि दूसरा देश, चाहे वह कोई सा भी है, अपने विचार में कितना ही ग़लत क्यों न हो, एक जागरूक देश है, विकास की ओर अग्रसर देश है, उसकी कुछ ऐसी नवीनता तथा सार्थकता है कि उसका अध्ययन करना होगा और उससे कुछ सीखना होगा। यही महत्वपूर्ण बात है। यही कारण है कि हमने सदैव सम्बन्धों तथा परस्पर बोध को प्रोत्साहन देने की चेष्टा की है।

अब जहां तक भारत का सम्बन्ध है, हमें यह लाभ प्राप्त है और अन्य देशों को भी या कम से कम उन में से कुछ को भी यह लाभ प्राप्त है कि हम मैत्री भाव से अन्य दशों से सम्पर्क प्राप्त कर सकते हैं। हम उनसे सहमत होते हैं या नहीं यह एक गौण बात है। क्योंकि हम उनके साथ मैत्रीपूर्ण ढंग से और एक ग्राह्य ढंग से बात कर सकते हैं, हम उस सम्बन्ध और सम्पर्क से लाभ उठा सकते हैं। हम उन्हें समझ कर लाभ उठा सकते हैं, चाहे कुछ ही हो जहां तक हम से हो सकता है, हम प्रतिकूल प्रभाव की रुकावटों को दूर करते हैं।

जिस सब से अधिक खतरे से संसार पीड़ित है, वह शीत युद्ध है। कारण इसका यह है कि शीत युद्ध लौह-आवरण या ईंटों की दीवार या किसी जेलखाने से कहीं बड़ी मानसिक रुकावट खड़ी करता है। यह ऐसी मानसिक रुकावटें उत्पन्न करता है जो एक दूसरे की स्थिति को समझने से इन्कार करती हैं, जो संसार को फ़रिश्तों और शैतानों में बांटती हैं कि हम फ़रिश्ते हैं और अन्य लोग शैतान हैं। हम यह मान सकते हैं कि हम में फ़रिशतों जैसी कुछ बात है, हममें कुछ ईश्वरीय देन है, परन्तु हम में बहुत हद तक शैतान भी भरा है। हम चाहे एक देश हों या एक व्यक्ति हों, असली बात यह है कि हमें, हम में जो अच्छाई है, उस पर ज़ोर देना चाहिये और उससे काम लेना चाहिये और अन्य व्यक्तियों की भी अच्छाई ग्रहण करनी चाहिये और इस प्रकार बुरे पहलुओं का दमन करना चाहिये।

मेरे विचार से यह हमारे देश, हमारी संसद् और हमारी जनता का एक गुण है। हम भयभीत नहीं हैं। हमें किसी देश से घृणा नहीं है। हम किसी देश को नापसन्द भी नहीं करते हैं। हम कोई एक आध चीज़ भले ही नापसन्द करें किन्तु किसी देश विशेष को नापसन्द नहीं करते हैं। इसलिये हमारा हृदय अन्य देशों की अपेक्षा अधिक ग्रहणशील है। भले ही वह साम्यवादी, साम्यवाद का विरोधी असाम्यवादी अथवा समाजवादी राष्ट्र हो। मेरे विचार से यह हमारा एक अच्छा गुण और एक अच्छी प्रजातन्त्रीय परम्परा है। इस परम्परा की समाप्ति से विश्व का भला नहीं होगा और युद्ध छिड़ जायेगा तथा सत्य पर कुठाराघात होगा। युद्ध में सर्वप्रथम सत्य की बलि होती है जिनके उपरान्त कई सद्गुणों की यही दशा होती है। शीत युद्ध में भी सत्य की यही दशा होती है तथापि इतनी नहीं, क्योंकि तब अवरोध इतना तीव्र नहीं होता है और किसी न किसी रूप में विचारों का आदान-प्रदान जारी रहता है। तथापि इससे व्यक्ति का मन पक्षपातपूर्ण हो जाता है। इसी कारण इन युद्धों तथा शीत युद्धों से क्षति होने के अलावा विश्व तथा मानवता को बहुत हानि हुई है। शीत युद्ध के ही परिणामस्वरूप राष्ट्रों की गुटबन्दी, भय तथा अस्त्रों की दौड़ व सन्धियां हुई हैं। हम कहते हैं कि कोई सैनिक सन्धि अथवा समझौता नहीं होना चाहिये। वस्तुतः सच्चे अर्थों में हम यही चाहते हैं, मैं जानता हूं कि हमारे यह कहने से भी दूसरे पक्ष वालों को भय होता है।

कोई भी राष्ट्र धन का, जब कि उसका अधिक अच्छा उपयोग हो सकता है, उसे शस्त्रों पर व्यय नहीं करना चाहता है। लेकिन वे ऐसा इसलिये करते हैं कि उन्हें यह भय बना रहता है कि यदि वे ऐसे नहीं करेंगे, तो अधिक खतरा होने की संभावना है। मेरे विचार से ऐसा होना सम्भव नहीं है। रूस के भय से 'नाटो' सन्धि की गई, रूस और चीन के भय से ही 'सीटो' और 'बगदाद सन्धि' की गई। मेरे विचार से इस सभा के सदस्यों में से अधिकांश व्यक्तियों का यह विचार है कि उस विशेष भय अथवा आशंका का सामना करने के लिये यह तरीका सब से बुरा है। घटनाओं से भी यह सिद्ध हो गया है।

वस्तुतः उलटी बात हुई है। 'नाटो' तथा 'बगदाद संधि' के भय से ही 'वारसा सन्धि' की गई है। इस प्रकार से क्रिया की प्रतिक्रिया होती है।

मेरे विचार से रूस के नेताओं ने कहा था "कि यदि जर्मनी से विदेशी सैनिकों को हटा लिया जाये तो हम पूर्वी यूरोप—पोलेंड, हंगरी, रूमानिया तथा अन्य प्रत्येक देश से समस्त सैनिक हटा लेंगे"। आप इस बात पर भले ही हंसें तथापि इसमें कोई बात अवश्य है। वह इसलिये डरते हैं क्योंकि अमेरिका डरता है। मुझे अवश्य ही ऐसा विश्वास है कि अन्त में सभी सैनिकों को हटा दिया जायेगा

मैं आपको एक उदाहरण देता हूं। मैं आज पोलेंड के प्रधान मंत्री तथा रूस के प्रधान मंत्री तथा अन्य नेताओं द्वारा उनकी वारसा यात्रा के दौरान हाल ही में दिये गये संयुक्त वक्तव्य का पूरा पाठ पढ़ रहा था। मैं इसे आपको भी सुनाऊंगा क्योंकि यह इस मामले से सम्बन्धित है इसलिये नहीं कि इससे मेरा मत प्रकट होता है, अपितु इस से पोलेंड वासियों की भावनाओं का भी पता चलता है।

> "दोनों पक्षों (पोलेंड की सरकार और रूस की सरकार) ने पोलेंड के राज्य क्षेत्र में रूसी सेना की टुकड़ियों की अस्थाई उपस्थिति से सम्बन्धित प्रश्नों पर चर्चा की। दोनों पक्षों ने यह मत व्यक्त किया है कि अभी तक ऐसा कोई सर्वसम्मत निर्णय नहीं हुआ है जिससे कि यूरोपीयन राज्यों को जर्मनी में पुनर्सैन्यीकरण के विरुद्ध पर्याप्त प्रतिभूति दे। प्रतिशोध चाहने वाले लोगों के द्वारा यूरोपीय राज्यों के बीच की सही-सही सीमाओं और पोलेंड की स्थापित और वर्तमान पश्चिमी सीमा के सम्बन्ध में निरंतर प्रश्न पूछा जाना भी यूरोप के देशों के आपसी सम्बन्धों को सामान्य स्थिति में लाने के बारे में बहुत बड़ी वाधा है।"
>
> "दोनों पक्ष इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि यह स्थिति तथा वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के कारण पोलेंड में रूस की सेना की टुकड़ियों की अस्थायी उपस्थिति आवश्यक है, यह अन्तर्राष्ट्रीय सन्धि और समझौतों के अनुसार जर्मनी में रूसी सेनाओं की उपस्थिति और आवश्यकता से सम्बन्धित है।"

भले ही यह बहाना हो तथापि इससे भय का विद्यमान होना स्पष्ट प्रगट होता है। कई माननीय सदस्यों को यह ज्ञात होगा कि पोलेंड की वर्तमान पश्चिमी सीमा को जर्मनी ने कभी स्वीकार नहीं किया है। उन्होंने चुनौती दी है और कहा है कि हम यह क्षेत्र वापस लेंगे। मैं इस प्रश्न के औचित्य के सम्बन्ध कोई मत नहीं देना चाहता हूं। किन्तु इन समस्याओं की पृष्ठ भूमि में इस बात को भुलाया नहीं जा सकता है कि स्वयं मेरी तथा अन्य लोगों की स्मृति में दो बार जर्मन सेनाओं ने पूर्वी यूरोप तथा यूरोप के अन्य भागों को उजाड़ दिया था। वस्तुतः जर्मनी एक महान् देश है, जर्मनी शान्ति की कला में महान् है ही, वह युद्ध की कला में उससे भी महान् है। वह आसानी से युद्ध की कला ग्रहण कर लेता है। वह वैज्ञानिक ज्ञान के सम्बन्ध में महान् है तथा सारे पूर्वी यूरोप में जर्मन आक्रमण की याद ताज़ा है। इसलिये पूर्वी यूरोप के प्रत्येक देश में यह मुख्य विचार है कि जर्मनी का दूसरा आक्रमण नहीं होना चाहिये तथा हमें अपनी रक्षा करनी चाहिये, मेरे विचार से जर्मनी की जनता के अधिकांश भाग की यह इच्छा नहीं है तथापि जर्मनी के सैन्यीकरण की प्रत्येक बात से उन देशों को भय होता है तथा प्रश्न पश्चिमी शक्तियों द्वारा इस खतरे के मोल न लिये जाने का है। उन्होंने 'नाटो' की स्थापना क्यों की। इसका कारण यह है कि वे रूस का खतरा मोल नहीं लेना चाहते हैं। जब जीवित रहने का प्रश्न पैदा होता है तो अच्छे सिद्धांत और भलमनसाहत धरी रह जाती है। जीवन और मरण का प्रश्न उत्पन्न हो जाता है। शीत युद्ध ठीक ऐसी स्थिति का परिणाम है।

अब आप इस समस्या पर तनिक विचार करें। आज इस समस्या को लीजिये। हम पर आकस्मिक एक अन्तर्राष्ट्रीय संकट उत्पन्न हो गया है। यह विपत्ति विशेषतः स्वेज नहर के राष्ट्रीयकरण के बाद से

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

प्रारम्भ हो गई थी तथा तदोपरान्त निरन्तर बढ़ती गई और माननीय सदस्यों को ज्ञात होगा कि राष्ट्रीय-करण के तत्काल पश्चात् माल्टा और साइप्रस में आंग्ल-फ्रांसीसी सेनायें भेजी गईं। उन्हें वायुयान वाहकों युद्धपोतों इत्यादि के द्वारा भेजा गया जिससे संकट वस्तुतः अधिक बढ़ गया और लोग भयभीत हो गये कि विश्व युद्ध प्रारम्भ होने वाला है। एक ओर तो यह बातें हो रही थीं, दूसरी ओर पोलेंड तथा हंगरी में आन्तरिक अशांति पैदा हो गई। कुछ सीमा तक पूर्वी यूरोप के अन्य देशों में भी अशांति पैदा हो गई। पोलेंड में क्रमशः शांतिपूर्ण समझौता हो गया। आन्दोलन वैसा ही था। वस्तुतः इस आन्दोलन की शुरूआत रूस ने पोलेंड के कुछ प्रतिबंधों और बन्धनों को हटा कर की। हंगरी में ऐसा नहीं हुआ तथापि मेरे विचार से यह संभव था कि यदि मिस्र पर यह आक्रमण नहीं होता तो हंगरी के इस विद्रोह का, जिसे अन्ततः रूस ने दबाया, बिल्कुल दूसरा रूप होता। इससे भय तथा अन्य कई बुराइयां पैदा हो गईं। सर्व-प्रथम एक अत्यन्त संकटमय स्थिति पैदा हो गई है। सम्भव है कि अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध हो और यदि अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध हुआ तो हम कोई खतरा मोल लेने को तैयार नहीं हैं।

दूसरे इंग्लैण्ड तथा फ्रांस जैसे देशों का, जिनकी प्रजातन्त्रीय देशों में बड़ी प्रतिष्ठा है, बीसवीं शताब्दी के बीच भी ऐसी बात कर रहे थे, जिससे अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में विधि तथा व्यवस्था के सामान्य नियम भी भंग हो गये तथा अन्य देशों के लिये भी भयभीत हो कर ऐसा ही करना अधिक सरल हो गया। वह भय क्या था मैं इसे समझने और उसका विश्लेषण करने का प्रयत्न कर रहा हूं हंगरी में जो कुछ भी हुआ उससे वह रूस का विरोधी हो गया। इससे विरोध की सीमा रूस तक आ गई जिससे रूमानिया और बल्गेरिया प्रभावित हुए और अव्यवस्था बढ़ गई। अब जर्मन सैन्यीकरण के अलावा भी सभी कुछ हो सकता है आप कह सकते हैं कि यह सब न्यायोचित नहीं है। मैंने एक बार इसी सम्बन्ध में एक महान् रूसी नेता से बातचीत की थी और मैंने पूर्ण आदर से उनसे यह निवेदन किया कि उनके भाषणों से अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के सुधार में बहुत सहायता नहीं मिलेगी क्योंकि उनसे उत्तेजना बढ़ती है। उन्होंने कहा आप ठीक कहते हैं हमने ऐसे भी भाषण दिये हैं किन्तु स्मरण रखिये हम ३० या ४० वर्ष तक घेरे में बन्द रहे हैं। इसी से हम में वे सभी भावनायें पैदा हो गई हैं जो कि कदखाने में रहने वाले व्यक्तियों की होती हैं। किसी भी भय की हम में तुरन्त प्रतिक्रिया होती है। निस्संदेह इसमें बहुत बड़ा खतरा है। हमें यह आदत हो गई है और हम कभी-कभी ऐसी बातें कह जाते हैं जिन पर हमें पीछे दुःख होता है। इसके पीछे यह मनोविज्ञान है।

वर्तमान समय में यह कहा जा सकता है कि यद्यपि कोई देश युद्ध नहीं चाहता तथापि प्रत्यक देश दूसरे से भयभीत होकर युद्ध की तैयारी करता है।

आचार्य कृपालानी की बात पर मुझे आश्चर्य है मेरे विचार से यह न्यायोचित नहीं है। उन्होंने संकल्प पर मतदान के सम्बन्ध में कुछ कहा है। उन्होंने कहा है कि यूगोस्लाविया ने इसलिये मतदान दिया कि उसे रूस का भय है। मेरे विचार से इससे अनुचित और कोई बात नहीं हो सकती है, यूगोस्लाविया अन्य देशों की तरह, 'डान कुइक्सोट' की भांति हाथ में भाला लिये नहीं फिरता। और न हमारे समाजवादी मित्रों की तरह अपने सिद्धान्तों की घोषणा करता है। वह यह नहीं कहता है कि दुनियां बुरी है और उसका सुधार होना चाहिये, ऐसा कह कर वह चुप होकर बैठ नहीं जाता है, बल्कि पिछले कई वर्षों में वह खतरे उठाकर भी रूस के विरुद्ध रहा है और अपने सिद्धांतों का प्रतिपालन किया है। पिछले एक दो वर्षों में रूस और यूगोस्लाविया के बीच की दीवार कुछ हटी है। यह रूस के प्रयत्नों से ही हटी है यूगोस्लाविया केवल इस पर सहमत हुआ है। रूस नें ही इसकी शुरुआत की है, क्योंकि स्वयं उनके देश के अन्दर बहुत से परिवर्तन हो रहे हैं। यह यूगोस्लाविया के भय से नहीं किया गया है। विश्व के उस भाग में यूगोस्लाविया का बहुत प्रभाव है। जो कुछ यूगोस्लाविया में हुआ है, स्वाभावतः उसका प्रभाव पौलेंड, हंगरी तथा अन्य देशों पर पड़ा है; इसका प्रभाव अन्य देशों पर और कुछ हद तक स्वयं रूस

पर पड़ा है। यूगोस्लाविया इन दो प्रकार के आन्दोलनों को प्रोत्साहित करता रहा है। एक आंदोलन उदारीकरण या लोकतन्त्रीकरण के लिये है और दूसरा यह है कि प्रत्येक देश पूर्णतया स्वतन्त्र होना चाहिये और उस पर किसी देश का प्रभाव या दबाव या अधिकार नहीं होना चाहिये। वे विकसित हो सकते हैं। यूगोस्लाविया वाले समाजवादी और साम्यवादी हैं, किन्तु वे ऐसे साम्यवादी नहीं हैं, जैसे रूसी हैं। साम्य-वाद के बारे में उनके अपने विचार हैं। उनका कहना है कि प्रत्यक अपने तरीके से समाजवाद को विकसित करे, जोकि बिल्कुल ठीक है। कुछ भी हो, मैं यह कह सकता हूं कि उन्होंने लगातार मुकाबला किया है और रूस के भय से या रूस की किसी अन्य कायवाही के कारण अपनी नीति को नहीं छोड़ा। मेरे विचार में यह कहना बहुत असाधारण बात होगी कि उन्होंने रूस के भय के कारण इस प्रकार मतदान किया है। मैं यह विशेष रूप से कहता हूं क्योंकि यूगोस्लाविया और इसकी नीति के बारे में प्रजा समाजवादी दल की राय बहुत अच्छी है और उसके कुछ नेता वहां गये भी हैं और यूगोस्लाविया के नेताओं से बातचीत की है। यूगोस्लाविया के प्रतिनिधियों ने उनके सम्मेलनों में भी भाग लिया है। पिछले दो या तीन वर्षों में भारत सरकार का यूगोस्लाविया के साथ काफी सम्पर्क रहा है और यूगोस्लाविया एक ऐसा देश है जिसके साथ हमने अन्य देशों की अपेक्षा स्थिति के बारे में अधिक बार विचार विनिमय किया है। यूरोप की स्थिति के सम्बन्ध में हम इसे बहुत महत्व देते हैं। इसका पहला कारण यह है कि भौगोलिक रूप से यूगोस्लाविया इस प्रकार स्थित है कि उसका केन्द्रीय, पूर्वी और दक्षिण यूरोप की स्थिति से गहरा सम्बन्ध है। ऐतिहासिक और भाषा की दृष्टि से उसका उन से गहरा सम्बन्ध है। पिछले ३० वर्षों में यूगोस्लाविया और रूस तथा यूरोप के अन्य देशों के नेताओं में घनिष्टतम सम्बन्ध स्थापित हो गये थे। बाद में वे अलग हो गये थे और अन्त में फिर इकट्ठे हो गये हैं। इसके फलस्वरूप यूगोस्लाविया के नेता, विशेषकर प्रधान टीटो स्थिति को अधिक अच्छी तरह समझ सकते हैं। आप इससे सहमत हो या न हों, यह और बात है, किन्तु वह एक योग्य और अनुभवी व्यक्ति हैं, अनुभव का अभिप्राय उच्च सिद्धांतों से नहीं है, बल्कि इस बात को जानने से है कि दूसरे पक्ष के मन में क्या है। अतः हम इसे बहुत महत्व देते हैं। मैं कह सकता हूं कि हम कुछ हद तक यूगोस्लाविया के नेताओं की राय से प्रभावित हुए हैं। जहां तक एशिया का सम्बन्ध है, हमें उनसे कुछ अधिक ज्ञान है और संभवतः वे एशिया की स्थिति के बारे में हमारी राय से प्रभावित होते हैं। यूरोप की स्थिति के बारे में हम निस्संदेह उनकी बात को महत्व देते हैं।

आज प्रातः मैं प्रधान टीटो के एक भाषण की रिपोर्ट पढ़ रहा था, जो उन्होंने ११ नवम्बर को पुला में दिया था। यह एक लम्बा भाषण है, किन्तु यूगोस्लाविया सरकार ने हमें यह बीस पृष्ठ का भाषण तार द्वारा भेजा है, जो हमें कल मिला है। इसमें उन्होंने हंगरी, मिस्र, यूरोप और विश्व की स्थिति का विश्लेषण किया है और वे अपने निष्कर्षों पर पहुंचे हैं। यह सच है कि उनके सामने जो उद्देश्य थे, वे हमारे उद्देश्यों या अन्य देशों के उद्देश्यों से भिन्न हो सकते हैं। यह और बात है, मेरा निवेदन यह है कि वह अपने ढंग से पिछले कुछ वर्षों से पूर्वी यूरोप के देशों में लोकतन्त्रीकरण के लिये काम करते रहे हैं। वह इन देशों के नेताओं से अच्छी तरह परिचित हैं और वह उनकी भाषा भी बोल सकते हैं और उन्हें उनसे बातचीत करने के लिये दुभाषिये की आवश्यकता नहीं होती। इसलिये उनकी राय से सहायता मिल सकती है। मैं २० पृष्ठों का यह भाषण पढ़ना नहीं चाहता हूं। केवल इतना कहूंगा कि कुछ विषयों में यह बिल्कुल सही है, यद्यपि कुछ मामलों में उनसे सहमत होना बहुत कठिन है। वर्तमान हंगरी सरकार के बारे में उन्होंने जो कुछ कहा है, वह मैं आपको पढ़ कर सुनाता हूं। यह मैं इसलिये कहता हूं क्योंकि एक माननीय सदस्य की इस बात से मुझे अत्यधिक आश्चर्य हुआ है कि श्री कादार एक देशद्रोही और कठपुतली हैं और उन्हें निकाल देना चाहिये।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

[**अध्यक्ष महोदय** पीठासीन हुए]

मैं यह आशा करता हूं कि इस सदन में अधिक उत्तरदायित्व से बात की जाये। मुझे खेद है कि इस सदन के एक सदस्य, मेरे अपने दल के एक सदस्य इस प्रकार के बेहूदा वक्तव्य दे सकते हैं। सम्भवत: श्री कादार को हंगरी के अधिकांश लोगों का समर्थन प्राप्त नहीं है। यह बात दूसरी है। किन्तु मेरे विचार में एक ऐसे व्यक्ति की निन्दा करना, और उन्हें क्विजलिंग कहना जिनका सारा जीवन स्वतन्त्रता के संग्राम में गुज़रा है, जिन्हें हंगरी की साम्यवादी अर्थात् पिछली या स्टालिनवादी सरकार ने कई वर्षों तक जेल में रखा है, जो अब बाहर आये हैं और श्री नाज की सरकार के एक वरिष्ठ सदस्य थे, अनुत्तरदायित्वपूर्ण व्यवहार की हद है।

अन्य सदस्यों ने कहा है कि इस सरकार को मान्यता न दी जाये। मुझे आश्चर्य है कि माननीय सदस्य इन समस्याओं के बारे में कैसे सोचते हैं। हम हंगरी को एक स्वतन्त्र देश मानते हैं। यदि कोई माननीय सदस्य कहें कि यह पूर्णतया स्वतन्त्र नहीं है, तो मैं सहमत हो सकता हूं। किन्तु मैं यह बताना चाहता हूं कि विश्व में बहुत कम देश पूर्णतया स्वतन्त्र हैं और जिनकी बागडोर किसी अन्य के हाथों में नहीं है। वे स्वतन्त्र भले हों और संयुक्त राष्ट्र संघ में एक पक्ष में या दूसरे पक्ष में मतदान करते हों, किन्तु मुझे इस बात पर संदेह है कि उनका मतदान शतप्रतिशत स्वतन्त्र मतदान होता है ऐसे देशों की संख्या बहुत है, जिन्हें पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं है।

मैं प्रधान टीटो के लम्बे भाषण में से एक पैरा पढ़ता हूं। विश्लेषण के बाद उन्होंने कहा :

> "हमें आज कादार सरकार की सहायता करनी चाहिये। साथियो! मैं अपने विषय से कुछ दूर चला गया हूं। मैं आपको बताना चाहता था कि हंगरी की वर्तमान घटनाओं को समाजवाद या क्रांति विरोध के दृष्टिकोण से देखते हुए, हमें कादार की वर्तमान सरकार का समर्थन करना चाहिये। हमें इसकी सहायता करनी चाहिये क्योंकि यह संकट में है·······"

मैं और नहीं पढूंगा। बात यह है कि किसी देश या विश्व को जिस स्थिति का सामना है, वह सरल नहीं होता। कई बार, विश्व में या व्यक्तिगत जीवन में या राष्ट्रीय नीतियों में हमें वह विकल्प अपनाना पड़ता है जो दो बुरे विकल्पों में से कम बुरा हो। विपत्ति या युद्ध से बचने के लिये हमें कुछ पग उठाने पड़ते हैं।

कुछ माननीय सदस्यों का विचार है कि हंगरी में जो कुछ हुआ है, वह बिल्कुल स्पष्ट है और हम वहां की स्थिति के बारे में एक शानदार भाषण दे सकते हैं। मैं उन्हें बता सकता हूं कि पिछले २० दिनों में—क्योंकि यह संकट ३१ अक्तूबर के लगभग ब्रिटेन और फ्रांस द्वारा मिस्र को चेतावनी दिये जाने से शुरू हुआ था—या पहले पखवाड़े में वैदेशिक-कार्य मंत्रालय ने दिन रात काम किया है, क्योंकि हमें यह कठिनाई पेश थी कि हम क्या करें, क्या कहें और क्या उत्तर दें। हमें अपने लोगों से, अन्य देशों से, अन्य देशों के नेताओं से आधी रात को सब प्रकार के संदेश प्राप्त हो रहे थे और हमें इन का तुरन्त उत्तर देना था और हमें कई बार अन्य महाद्वीपों को टेलीफोन करना पड़ा। हमें बहुत जटिल स्थिति का सामना था और किसी स्थिति का मुकाबला कोई सूत्र बता कर नहीं किया जा सकता। एक ऐसा पग उठाना पड़ता है, जिससे स्थिति में सुधार हो हमें सब से अधिक चिन्ता इस बात की थी कि हमें युद्ध से बचना चाहिये और इससे बचने के लिये हम जो कुछ कर सकते हैं, करना चाहिये, क्योंकि युद्ध से सर्वनाश हो जाता है, यदि युद्ध न हो, तो जो हानि हो चुकी है, उसे ठीक किया जा सकता है और कोई रचनात्मक कार्यवाही की जा सकती है। अन्य स्थानों पर हमारे राजनयिक प्रतिनिधियों का भी यही हाल हुआ है।

श्री शिवाराव ने शिकायत की है कि हमने सदन को पर्याप्त जानकारी नहीं दी और हमें समय-समय पर सदस्यों के लिये ज्ञापन जारी करने चाहिये। मुझे सदन को अधिक से अधिक जानकारी देकर प्रसन्नता

होगी, किन्तु मैं उनका अर्थ नहीं समझा। यदि संसद् का सत्र ही रहा हो और कोई महत्वपूर्ण घटना हो, तो सदन को उसके बारे में बताना मेरा कर्त्तव्य है और किसी ज्ञापन की आवश्यकता नहीं है। यदि सत्र न हो रहा हो, तो मैं दूसरे तरीके से जानकारी दे सकता हूं। किन्तु इन २·५ सप्ताहों में, स्थिति इतनी जल्दी बदल रही थी और तथ्य इतने अस्पष्ट थे कि कोई ज्ञापन जारी करना आसान काम नहीं था। हमें यह डर था कि हम कोई ग़लत बात न कह दें या ठीक बात ग़लत समय पर न कर दें। यह याद रखना चाहिये कि ठीक बात को ग़लत समय पर कहने से भी हानि हो सकती है। ऐसे मामलों में क्या कहना चाहिये, कब कहना चाहिये और कैसे कहना चाहिये, यह बहुत कठिन है।

आचार्य कृपालानी ने कहा है कि हमारे राजनयिक प्रतिनिधियों को यह पहले ही भाप लेना चाहिये था कि क्या होने वाला है। यदि वे ऐसा कर सकते तो मुझे बहुत प्रसन्नता होती, परन्तु मैं यह नहीं समझ सकता कि हम अपने नवयुवकों से इस प्रकार की भावी घटनाओं का पहले से अनुमान लगाने को कैसे आशा कर सकते हैं, जबकि विश्व के किसी आदमी को इनका ज्ञान नहीं था। इजराइल ने मिस्र पर आक्रमण किया। तीन-चार दिन पहले इसकी कुछ आशंका थी। सदन को याद होगा कि इस आक्रमण से ठीक एक मास पूर्व इज़राइल के प्रधान मंत्री श्री बेन गूरियन ने घोषणा की थी कि वह निवारक युद्ध के पक्ष में नहीं है। और वह ऐसा युद्ध नहीं करेंगे। यह बहुत असाधारण बात है कि एक प्रधान मंत्री इस प्रकार का आश्वासन देकर एक मास के अन्दर उसका उल्लंघन कर देंगे।

आशंका इस बात से उत्पन्न हुई थी कि प्रधान आइजनाहोवर ने—आप जानते हैं कि इंग्लैंण्ड और अमेरिका के संसाधन हमारे संसाधनों से कहीं अधिक हैं—एक अपील जारी की थी, जिसमें उन्होंने इज़राइल और अन्य देशों से संयम से काम लेने के लिये कहा था और लोगों की निकलने के लिये तैयार रहने की भी बात चली थी। यह हमने इज़राइली आक्रमण से तुरन्त पूर्व समाचारपत्रों में पढ़ा था।

जहां तक आंग्ल-फ्रांसीसी चेतावनी का सम्बन्ध है, राष्ट्रमंडल के देशों और अमेरिका के सहित, जो इंग्लैण्ड और फ्रांस का मित्र है विश्व के किसी भी देश को इस के बारे में अल्टीमेटम से पूर्व कुछ ज्ञान नहीं था। मुझे अल्टीमेटम के साथ-साथ संदेश भी रात्रि में कुछ विलम्ब से मिला था। यह मुझे देर से प्राप्त हुआ जबकि अल्टीमेटम अगले दिन प्रातः काल आठ बजे समाप्त होने वाला था। संदेश अर्द्ध रात्रि अथवा उसके आस-पास मिला था।

आचार्य कृपालानी तथा दूसरे व्यक्तियों ने इस प्रश्न की बार-बार चर्चा की है कि हमारे साथ मंत्रणा क्यों नहीं की गई, मेरा विचार है कि इस प्रश्न पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है। परामर्श तो किसी से भी नहीं किया गया था। यहां तक अमरीका से भी परामर्श नहीं किया गया था जबकि वह सैनिक तथा अन्य दृष्टियों सें ब्रिटेन के लिये इतना अधिक महत्वपूर्ण है। राष्ट्रमंडल के अधिकांश देश इस बात के लिये क्षुब्ध हैं कि इस प्रकार के मामले में उनसे मंत्रणा नहीं की गई। किन्तु फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि यह दैवी प्रकोप था। कितना ही अनुभवी कूटनीतिज्ञ क्यों न हो वह उस घटना के सम्बन्ध में अनुमान नहीं कर सकता था। हां यह बात दूसरीं है कि वह ज्योतिष विज्ञान का ज्ञाता हो।

दो या तीन महीनों पूर्व सऊदी अरब और सीरिया की यात्रा से लौटते समय मिस्र स्थित भारतीय राजदूत से मेरी भेंट हुई। वह बेरूत आया। अत्यधिक परिश्रम के कारण राजदूत बीमार हो गया था। और मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि जब हम बेरूत के एक बरामदे में बातचीत कर रहे थे तो वह मूर्च्छित हो गये। यह आश्चर्य की बात थी।

हमने उसे सम्बल प्रदान किया। राजदूत को बिस्तर में लिटाया गया। तब उन्हें कुछ होश आया। कितना अधिक परिश्रम उन्होंने किया था। मैंने उनसे कहा: "कृपया बेरूत में सात या आठ दिन ठहर कर विश्राम कीजिये।" मेरे यहां आने से एक दिन बाद समाचार मिला कि स्वेज नहर का राष्ट्रीयकरण कर

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

दिया गया है। इस संवाद के तुरंत बाद यह भी सुनाई दिया कि ब्रिटिश युद्धपोत चारों ओर मंडरा रहे हैं। बिचारे राजदूत को शीघ्र ही काहिरा लौट जाना पड़ा। काहिरा में इन दो या तीन महीनों में राजदूत को अत्यधिक कार्य करना पड़ा। जब वह पूर्णतया थक गये तो उन्हें थोड़ा अवकाश दिया गया। हमारा विचार था कि अब सुरक्षा परिषद् ने छः सिद्धांत मान लिये हैं जिनके आधार पर स्वेज नहर का प्रश्न सुलझ जायेगा और युद्ध का भय भी टल जायेगा। अन्य अनेक व्यक्तियों का भी यही अनुमान था। वस्तुतः संयुक्त राष्ट्र के महासचिव श्री हैमरशोल्ड ने मिस्र इंग्लैंड और फ्रांस तथा संभवतः अन्य देशों के प्रतिनिधियों की परस्पर बातचीत के लिये एक तिथि भी निर्धारित कर दी थी। सबसे अधिक कौतूहल इस बात का हुआ कि श्री हैमरशोल्ड ने जो तिथि निश्चित की थी ठीक उसी दिन ब्रिटिश, अथवा ब्रिटिश-फ्रांसीसी अल्टीमेटम दे दिया गया। उस प्रकार हमारे राजदूत के संक्षिप्त अवकाश पर आने के दो या तीन दिन पश्चात् यह घटना घटी। उन्होंने हैदराबाद से मुझे टेलीफोन करते हुए कहा: "मुझे शीघ्र लौटना चाहिये।" मैंने कहा, "हां, अवश्य जाइये।" किन्तु वापस किस प्रकार लौटा जाये। हवाई जहाजों ने मिस्र जाना बन्द कर दिया था। राजदूत ने कहा, "मैं दमिश्क होकर जाऊंगा।" दमिश्क का रास्ता बन्द था। राजदूत दृढ़ थे: "मैं इस्तम्बूल जाऊंगा।" वहां से वह लीबिया और फिर लीबिया से काहिरा पहुंचे। सारे मार्ग रुके हैं। वहां कोई नहीं जा सकता है। वह पुनः रोम लौटे। वहां से खारतूम का रास्ता पकड़ा और खारतूम से सड़क तथा नदी के सहारे काहिरा पहुंच सके। यह उनके लौटने की गाथा है।

इसके पश्चात् लन्दन स्थित उच्च आयुक्त की बात है। स्थिति में सुधार होने पर स्वास्थ्य के कारणों से कुछ छुट्टियां दी गई थीं। उच्चायुक्त के यहां आने के पश्चात् शीघ्र ही यह घटनायें हुईं। दूसरे ही दिन उन्होंने मुझे टेलीफोन किया? "मैं वापस जाने के लिये तैयार हूं।"

†**श्री कामत**: वह दिल्ली नहीं आईं थीं।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू**: वह इलाहाबाद में थीं। उन्होंने टेलीफोन पर कहा: "मैं शीघ्र ही वापस लौटने के लिये तयार हूं।" मैंने उनसे पहिले दिल्ली आने के लिये कहा। वह पहले यहां आईं और फिर दो या तीन दिन पश्चात् लन्दन के लिये लौट गईं। वह दो-तीन दिन पहिले लौट सकती थीं किन्तु उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था। फिर भी वह यथासंभव शीघ्र ही लौट गईं।

हंगरी स्थित प्रतिनिधि के सम्बन्ध में भी कुछ कहना है। हंगरी में श्री के० पी० एस० मेनन हैं जो मास्को में हमारे राजदूत हैं। यद्यपि वह सामान्यतया मास्को में रहते हैं किन्तु हंगरी भी जाते रहते हैं। पोलैंड सदृश अन्य देशों में भी ऐसा ही है क्योंकि सर्वत्र दूतावासों की स्थापना के लिये हमारे पास व्यक्ति नहीं हैं। हंगरी में तनाव के कारण हमने एक नये पदाधिकारी को वहां भेजा ताकि वह राजदूत अथवा प्रथम सचिव को रिपोर्ट भेज सके। यह पदाधिकारी तब से वहीं हैं। उसने अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य किया है। वह कम आयु वाला एक ऐसा व्यक्ति है जो अपरिचित देश में कार्य कर रहा है। हमने मास्को स्थित हमारे राजदूत श्री के० पी० एस० मेनन को लिखा है कि वह शीघ्र हंगरी जाकर रिपोर्ट भेजें।

इस तथ्य की ओर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में पर्याप्त कहा गया है कि भारत सरकार और संयुक्त राष्ट्र संघ को गये हुए भारतीय प्रतिनिधि मंडल में मतभेद है। मैं यह स्पष्ट बता दूं कि भारत सरकार और हमारे प्रतिनिधियों के बीच पूर्ण मतैक्य है। प्रतिनिधियों के रवाना होने से पहिले परस्पर विशद चर्चा होती है और हम विषय पर पूरा विचार करते हैं। इसके अतिरिक्त उनसे हमारा पत्र-व्यवहार निरन्तर बना रहता है। स्वाभाविक है कि ऐसा सदैव नहीं किया जा सकता किन्तु आपातकालीन सत्र प्रायः होते ही रहते हैं। सहसा अर्द्ध रात्रि को संकल्प प्रस्तुत किये जाते हैं और आपात के परिणाम-स्वरूप उन्हें उसी समय पारित कर दिया जाता है। अभी जब हम इस सदन में बैठकर वक्तृतायें सुन रहे

†मूल अंग्रेजी में।

हैं न्यूयार्क से आये हुए एक टेलीफोन में मुझे अभी बताया गया है कि वहां आज क्या हो रहा है। कुछ देश हंगरी से वहां के कुछ लोगों को निर्वासित करने सम्बन्धी समाचार के बारे में एक संकल्प की प्रस्थापना कर रहे हैं। मेरे पास संकल्प का पाठ नहीं है। कदाचित् यह समाचारपत्रों में छपा है। इन निर्वासन के मामलों के बारे में समाचार निकले हैं उनमें कहा गया है कि संयुक्त राष्ट्र संघ शीघ्र कुछ व्यक्तियों को भेजकर कोई कार्यवाही करे। हमने इस संकल्प का अनुमोदन नहीं किया। हमने एक अन्य संकल्प प्रस्तुत किया। हंगरी और सोवियत रूस के प्रतिनिधियों ने इस समाचार का खण्डन किया है कि लोगों को निर्वासित किया गया है। अतः सही तथ्यों को मालूम करना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि निर्वासन की धारणा अरुचिपूर्ण ही नहीं है अपितु नैसर्गिक प्रवृत्ति के विरुद्ध भी है। हमें तथ्य मालूम करना चाहिये और हंगरी की सरकार से कहना चाहिये कि वह संयुक्त राष्ट्र के प्रतिनिधियों अथवा महासचिव को वहां जाकर इस मामले की जांच करने की अनुमति दें। मेरे पास उसके शब्द ज्यों के त्यों नहीं हैं किन्तु उनका भाव यही है। हमारा विचार था कि संयुक्त राष्ट्र जैसी उत्तरदायी संस्था के लिये बिना जांच के निर्णय की घोषणा करना उचित नहीं है। निर्णय के पहले जांच से साधारण अन्तर नहीं पड़ेगा, जांच करना श्रेयस्कर है। सही बात यह है कि बिना जांच के निर्णय बुरा है। हमने कहा, "इस विषय की जांच करिये।" मैं नहीं जानता कि महासभा में आज क्या फैसला होगा। यदि हमारा संकल्प प्रस्तुत किया गया और स्वीकार हो गया तो अच्छी बात है। यदि कोई अन्य संकल्प स्वीकृत हुआ तो हमारा प्रतिनिधि मतदान के समय अनुपस्थित रहेगा। आप यह नहीं कह सकते कि पहला पैराग्राफ इस प्रकार है और दूसरा पैराग्राफ उस प्रकार है तथा इसमें कुछ बुराई नहीं है। आप इन बातों पर इस प्रकार विचार नहीं कर सकते। हमें समूचे विषय पर विचार करना है। पूरा विषय, उसकी पृष्ठ भूमि तथा उसका अभिप्राय इन सब पर विचार करना है।

चार नवम्बर का संकल्प ही लीजिये जो इतनी चर्चा का विषय बन चुका है। यह संकल्प पाकिस्तान, क्यूबा तथा दो या तीन दूसरे देशों ने रखा था और हमने इसके विपक्ष में मत दिया था।

†**श्री कामत** : नौ नवम्बर के दिन।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : यही संकल्प लीजिये; इसका संपूर्ण संदर्भ लीजिये। इस कथन में कोई लाभ नहीं है कि प्रस्तावना में संयुक्त राष्ट्र के सम्बन्ध में कुछ और कहा गया है और हम इसके विरूद्ध नहीं हैं। संदर्भ देखने की आवश्यकता है। उसका लक्ष्य देखिये। उसके अभिप्राय पर विचार करिये। दुर्भाग्य से ऐसी ही कठिनाइयां उत्पन्न हो गई हैं।

हंगरी और मिस्र की घटनाओं से शीत युद्ध ने गहन रूप धारण कर लिया है। यह ठीक नहीं है। सोवियत संघ हंगरी को विस्मृत कर बैठा है, उस पर उन्होंने चादर डाल दी है और मिस्र तथा आंग्ल-मिस्री आक्रमण की बात कर रहे हैं। दूसरे देश मिस्र को भूल कर केवल हंगरी के बारे में बातचीत करते हैं।

†**आचार्य कृपालानी** : हमें दोनों पर ही चर्चा करनी चाहिये।

†**श्री जवाहरलाल नेहरू** : समाजवादी दल भी मिस्र को विस्मृत कर केवल हंगरी के बारे में चर्चा कर रहा है। (**अन्तर्बाधा**) मैं आपसे केवल इतना ही कहूंगा कि आप इस बात का पता लगायें कि हंगरी और मिस्र के सम्बन्ध में दी गई वक्तृताओं पर कितना-कितना समय दिया गया है। आप सदन में भाषणों के लेखे से इसका हिसाब लगा सकते हैं। इससे भी बढ़कर बात यह है कि समय के परिमाण को नहीं अपितु यह देखिये कि किस विषय पर कितना बल दिया गया है। वरिष्ठ व्यक्तियों के प्रति आदर की सम्पूर्ण भावना के साथ मैं यह कह दूं कि दुर्भाग्य से यह विषय गलत हाथों में पहुंच गया है। इस प्रकार के

†मूल अंग्रेजी में।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

विषयों में, और विशेष रूप से हंगरी के मामले में 'सांस्कृतिक स्वातन्त्र्य संस्था'' 'प्रजातांत्रिक गवेषणा सेवा' और अनेकानेक संस्थाओं की ओर से हस्तक्षेप किया जा रहा है। मैं उन संस्थाओं की ओर निर्देश कर रहा हूं जो 'सांस्कृतिक स्वातन्त्र्य संस्था' के उच्च ध्वनि निनादित नामों की ओट में काम कर रही हैं। मैं नहीं जानता कि इस संस्था में प्रजातंत्र तथा संस्कृति सरीखी कौन-सी बात है। वे केवल राजनीतिक संस्थायें हैं। राजनीतिक संगटनों की नाईं यह भी एक संस्कृति सम्बन्धी संगठन है। किन्तु उसका उद्देश्य साम्यवाद की अभिवृद्धिमात्र है।

इन उच्च निनादित नामों के होते हुए भी इन परस्पर विरोधी संगठनों का आविर्भाव हुआ है। इनके मुख्य कार्यालय सामान्यतया बम्बई में हैं, प्रजा समाजवादी दल से उनका प्रगाढ़ सम्बन्ध है और यह प्रजातंत्र तथा स्वतन्त्रता का प्रचार इस अनोखे ढंग से कर रहे हैं। यह विषम स्थिति है।

यह दो महत्वपूर्ण विषय हैं जिनका प्रभाव सारे विश्व पर पड़ रहा है। उनके गुणावगुण पर ध्यान दिये बिना केवल दो दृष्टिकोण लेकर उन पर चर्चा की जाती है। 'सांस्कृतिक स्वतन्त्रता संस्था'' का एक दृष्टिकोण है दूसरी संस्था का उद्देश्य हमारी सरकार की जहां-तहां निन्दा करने का है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है। इसी प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप जो भी संकल्प संयुक्त राष्ट्र संघ में रखे जाते हैं उनमें से कुछ संकल्प राजनीतिक मंशा के होते हैं। वह मंशा कुछ दलों को, हंगरी में संघर्ष करने वाली और मिस्र में जूझने वाली जनता को निन्दित करना है। भाषण इसी दृष्टिकोण से दिये जाते हैं कि जनता का ध्यान एक विषय से हटा कर दूसरे विषय की ओर परावर्तित किया जा सके।

नवम्बर के प्रथम सप्ताह में विश्व का ध्यान मिस्र की ओर केन्द्रित था। समूचे सदन को ज्ञात है कि मिस्र में आंग्ल-फ्रांसीसी और इजराइल के आक्रमण के विरुद्ध सारे विश्व में एक तीव्र प्रतिक्रिया हुई थी। उसी समय हंगरी का प्रश्न भी उत्कट रूप में प्रस्तुत हुआ। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इजराइल के प्रश्न पर गम्भीर रूप से विचार करने की आवश्यकता है। मैं इस कथन से सहमत हूं कि इस प्रश्न ने चिन्ताजनक स्थिति उत्पन्न कर दी है। किन्तु इस समस्या पर इस ढंग से विचार किया गया कि हंगरी में यह घटना हुई है अतः अब मिस्र की अपेक्षा हंगरी पर ध्यान देना चाहिये। हंगरी के सम्बन्ध में इस तरह के आन्दोलन में वहां की असहाय जनता का कोई हाथ नहीं है। मैं वहां की जनता के बारे में नहीं कह रहा हूं; अपितु मैं उन लोगों के बारे में कह रहा हूं जो हंगरी की जनता के भविष्य के सम्बन्ध में उक्त दृष्टिकोण स विचार करते हैं। कुछ व्यक्तियों की हंगरी के प्रश्न के बारे में धारणा है कि वह अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की शतरंज का एक पासा है। कुछ अन्य व्यक्तियों की मिस्र के बारे में भी यही धारणा है। इस क्षणिक आवेश और उद्विग्नता में प्रवाहित हो जाना सरल है। एक प्रतिनिधि मंडल का कर्तव्य है कि वह इस प्रकार की घटना से प्रवाहित न हो; इसके विपरीत उसका काम घटना को रोकना है। अतः यह किसी कण्डिका अथवा उपकण्डिका की शब्दावली का प्रश्न नहीं है। सम्पूर्ण संदर्भ पर विचार करने की आवश्यकता है। हमें यह भी याद रखना है कि कब तथा किस प्रकार सारी बात रखी गई। एक माननीय सदस्य ने जिनका नाम मैं भूल गया हूं, संकल्प के समय तथा उसे प्रस्तुत करने वाले देश का नाम बताया। आदर की सम्पूर्ण भावना के साथ म कह सकता हूं कि किसी भी महत्वपूर्ण देश ने यह संकल्प प्रस्तुत नहीं किया था। चाहे वह बाद म इसके पक्ष में मत दें किन्तु उन्होंने यह प्रस्तुत नहीं किया था। उन्होंने इसे प्रस्तुत क्यों नहीं किया? उनका विचार था कि उन परिस्थितियों म यह संकल्प उत्तरदायित्वपूर्ण नहीं था। स्वाभाविक है कि जब मतदान का समय आया तो उन्होंने सोचा कि श्रयस्कर यही है कि पक्ष में मत दिया जाये। सारी बात का यही ब्योरा है। दूसरे देशों में और कुछ सीमा तक स्वयं भारत में सारे प्रापैगेण्डा का मूल इसी बात को लेकर है कि भारत ने इसके पक्ष में मत दिया, भारत ने उसके समर्थन में मत दिया, आदि। स्पष्ट है कि सम्पूर्ण घटना के पीछे एक राजनैतिक उद्देश्य था—भारत को निन्दित करना क्योंकि कई मामलों में

संयुक्त राष्ट्र में विचार के समय भारत ने दृढ़ विचारधारा अपनाई है। यह ठीक है कि अधिकतर लोगों को तथ्य ज्ञात नहीं थे और उनकी जो प्रतिक्रिया हुई उसके लिये उन्हें दोष नहीं दिया जा सकता। किन्तु मेरा निवेदन यह है कि इस सब का तात्पर्य यह था कि भारतीय प्रतिनिधि मण्डल और भारत सरकार को ग़लत साबित करने का प्रयत्न किया जाय और हो सकता है कि इस प्रकार के बड़े पैमाने पर किये गये प्रचार का भारत में भी बहुत से लोगों पर प्रभाव पड़ा हो।

मैं सदन से प्रार्थना करता हूं कि इस चीज को सब बातों पर विचार करते हुए सोचें। यही कारण है कि मैंने श्री कृष्णा मेनन द्वारा हंगरी के सम्बन्ध में दिये गये दोनों भाषणों की प्रतियां परिचालित करने का असाधारण कदम उठाया। उनके पूरे भाषण से हमारा दृष्टिकोण पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है और इसीलिये मैं चाहता हूं कि सदन उन दोनों भाषणों को पढ़े और तब अपना निर्णय दे। किसी भी ग़लतफहमी को दूर करने के लिये मैं इस बात को फिर दोहराना चाहता हूं कि उनका भाषण हमारा सही दृष्टिकोण व्यक्त करता है और वह मत सही दिया गया था। यदि फिर कभी इसी प्रकार की कोई परिस्थिति पैदा हुई तो हम फिर इसी प्रकार मत देंगे। किन्तु ग़लत शब्दों से मढ़े हुए संकल्प के पक्ष में मत लेकर हमें ग़लत नीति-निर्माण का भागीदार नहीं बनाया जा सकता। हो सकता है कि उसका कोई भाग स्वयं में सही हो। किन्तु उसका विरोध करने का मेरे पास न्यायोचित कारण है, चाहे यहां-वहां यह अच्छा क्यों न हो। इसमें से हम कुछ इधर से और कुछ उधर से नहीं ले सकते।

कुछ सदस्यों ने इजराइल के सम्बन्ध में बरती गयी हमारी नीति के सम्बन्ध में प्रश्न उठाया। हमने भूतकाल में इजराइल के सम्बन्ध में जो नीति अपनायी उसे और उसके कारणों को कभी गुप्त नहीं रखा। इजराइल के संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य बन जाने के कुछ समय पश्चात् तथा अन्य अनेक देशों द्वारा मान्यता दी जाने के पश्चात् हमने उसे मान्यता दे दी। हमने इसलिये उसे मान्यता दी कि हमारी यह नीति थी कि जो भी स्वतन्त्र देश हो और संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य हो उसे मान्यता दी जाये। स्पेन को जिसे हमने एक लम्बे अरसे तक अन्य कारणों से मान्यता नहीं दी थी, उपरोक्त कारण से ही हमने मान्यता दी, यद्यपि हमारा स्पेन की नीति से भूतकाल में काफी मतभेद रहा है। अब स्पेन का प्रतिनिधि भी हमारे देश में मौजूद है। एक बार मान्यता देकर यह युक्तियुक्त ही हो जाता है कि दौतिक आदान-प्रदान होता। किन्तु इसके साथ-साथ हम बराबर गत दो-तीन वर्षों से यह भी प्रयत्न कर रहे थे कि अरब देशों और इजराइल के मध्य मत-भेद कम हो जाये। हमने इस बात का प्रयत्न किया और इस निदान पर पहुंचे कि विद्यमान आवेशों को देखते हुए, यदि हम इजराइल को मान्यता दे दें तो हमारा कार्य कठिन हो जायेगा। प्रश्न इस बात का है कि विद्यमान परिस्थिति को देखते हुये आप यह निर्णय करें अपने लक्ष्य की प्राप्ति सर्वोत्तम प्रकार से कैसे की जा सकती है। मैंने मिस्र वालों से तथा अन्यों से इस बारे में कहा किन्तु मुझे कहना पड़ता है कि इजराइल की बढ़ती हुई आक्रांतमक प्रवृत्ति देख कर मुझे आश्चर्य हुआ दूसरी ओर भी काफी आक्रांतमक कार्यवाही हुयी है और जोशीले भाषण दिये गये हैं, किन्तु संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रेक्षकों ने जो वहां युद्ध विराम रेखा पर थे जो अभिलेख रखा है उसे यदि माननीय सदस्य देखें तो माननीय सदस्यों को विदित होगा कि इजराइल की ओर से मिस्र की अपेक्षा अधिक आक्रमक कार्यवाही हुई है।

अन्त में, इजराइल की इस अंतिम कार्यवाही ने मुझे हैरान कर दिया है। नैतिक रूप से तो यह निंदनीय है ही किन्तु किसी भी देश के लिये इस प्रकार का जुआ खेलना बहुत मूर्खतापूर्ण है। इस समय मैं बड़े असमंजस में हूं। कुछ मास पूर्व भी मुझे आशा थी कि किसी प्रकार का समझौता हो जायेगा। किन्तु अब मेरी समझ में बिलकुल नहीं आता कि अरब देशों और इजराइल के बीच समझौता किस प्रकार हो। भावनाओं को इस सीमा तक उभाड़ा गया है कि काफी समय बीत जाने पर ही लोग इस चीज को भूल सकते हैं।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

श्री चट्टोपाध्याय ने कहा कि हम राष्ट्रमंडल से अलग क्यों नहीं हो जाते। यह प्रश्न विभिन्न संदर्भों में अनेक अवसरों पर उपस्थित हुआ है और मैंने विविध कारणों से राष्ट्रमंडल में रहने का समर्थन किया है। यह बिलकुल सही है कि मिस्र पर आंग्ल-फ्रांसीसी हमले से इस प्रश्न पर नये सिरे से विचार किया जाना है। हमारे एक पुराने राजनीतिज्ञ ने तथा अन्य लोगों ने भी इस प्रश्न पर लिखा और बोला है। वास्तव में हमने इस पर विचार किया था और कलकत्ते में उस दिन मैं इस पर बोला था।

सबसे पहले तो हमें यह सोचना है कि क्या राष्ट्रमंडल को छोड़ने का हमारे पास पर्याप्त कारण है। सब चीजों को देखते हुए, मैं नहीं समझता कि इस घटना के कारण हमारे लिये राष्ट्रमंडल छोड़ देना उचित होगा। कोई भी कार्यवाही इसलिये की जाती है कि उसका कोई परिणाम निकले। यहां परिणाम केवल यह होगा कि इससे हमारी मिस्र पर आक्रमण के विरुद्ध दृढ़ भावना को अभिव्यक्ति मिलेगी। यह भावना इस समय व्यक्त करना ठीक भी है। किन्तु हमने इस भावना को पहले ही बड़ी दृढ़तापूर्वक व्यक्त किया है और मिस्र पर किये गये आक्रमण के प्रति हमारा क्या रुख है इसमें किसी को भी लेशमात्र सन्देह नहीं हो सकता।

फिर, हमें इस बात पर विचार करना है तात्कालिक तथा दीर्घकालिक दृष्टिकोणों से। तात्कालिक समस्या यह है कि इस परिस्थिति को विश्व-युद्ध में परिणित होने से रोकने के लिये हम क्या कर सकते हैं। हमारा ख्याल है कि हमारी इस प्रकार की कार्यवाही से इस ओर कोई सुधार नहीं होगा, अपितु परिस्थिति और बिगड़ जायेगी।

दीर्घकालीन दृष्टिकोण से भी---यह मानते हुए कि युद्ध न हो और परिस्थितियां एक स्तर तक सुधर जायें---मेरा ख्याल है कि राष्ट्रमंडल की सदस्यता हमें जारी रखना ही उचित है। हमारे ख्याल में यह सहायक है, यह शान्ति स्थापना में सहायता कर सकती है; शान्ति स्थापना में इसने सहायता की है। एक सदस्य ने पूछा कि इससे आप तत्काल किस प्रकार शान्ति कायम रखते हैं? निश्चय ही हम नहीं जानते, किन्तु मैं कहता हूं कि अन्यथा भी आप किस प्रकार यह कर सकते थे। कितनी ही समस्यायें हैं जिनको हमें ध्यान में रखना है और विशेषकर, इस बढ़ती हुई जटिल विश्व परिस्थिति में, हमारा ख्याल है कि जो चीजें हुई हैं उन पर खीज और क्षोभ प्रकट करके राष्ट्रमंडल से सम्बन्ध तोड़ दें तो यह सहायक नहीं होगा। मेरा ख्याल है कि यह सम्बन्ध हमारे लिये अच्छा है और मेरा ख्याल है इंग्लैंड के हित में भी यह सम्बन्ध है। कम से कम कुछ राष्ट्रमंडल के देशों को मैं जानता हूं, जिनकी मैत्री और जिनके मत का हम आदर करते हैं, जो कि राष्ट्रमंडल में बने रहना चाहेंगे। किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि हम एक बड़ी अनिश्चित परिस्थिति में से गुजर रहे हैं और मैं नहीं जानता कि अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति क्या रूप धारण करेगी, यह उस पर निर्भर है।

आचार्य कृपालानी ने हमारे संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रतिनिधि मण्डल के कुछ सदस्यों द्वारा जारी किये गये वक्तव्य के सम्बन्ध में कुछ कहा। जहां तक मुझे ख्याल है, इसे जारी करने वाले सभी सदस्य संसद् के सदस्य हैं, जिन्हें यहां के माननीय सदस्यगण भली भांति जानते हैं। कुछ दिनों पूर्व उन्होंने मुझे सूचित किया---मुझे यह नहीं मालूम था कि वे कोई वक्तव्य निकाल रहे थे---कि उन्हें भारत द्वारा दिये गये मत पर हुए शोरगुल पर आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा कि हमने भाषण सुने और केवल यही मार्ग था जो कि अपनाया जा सकता था। यह उनकी धारणा थी, और उन्होंने मुझे यह सूचित किया। तब अंततोगत्वा उन्होंने यह वक्तव्य निकालने का निर्णय किया, जिसका उन्हें पूरा अधिकार था। स्वभावतः ही प्रतिनिधि-मंडल के आफिशियल सदस्यों से सरकार के किसी कार्य के समर्थन में कोई वक्तव्य जारी करने की आशा नहीं की जाती। किन्तु मैं अपने प्रतिनिधि मण्डल द्वारा, विशेषकर उसके नेता द्वारा, किये गये कार्य की सराहना किये बिना नहीं रह सकता। अब लगभग एक ऐसी परिस्थिति आ पहुंची है जहां एक आंतरिक

और गहरा संकट पैदा हो रहा है जिसे हमें दूर करना है, इसलिये नहीं कि हम किन्हीं अन्य देशों से किसी प्रकार अच्छे हैं, किन्तु केवल इसलिये कि अन्य देशों से हमारे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध हैं और हमारी ऐसी स्थिति हो गयी है कि हम कुछ सहायक बन सकते हैं।

अगले कुछ सप्ताहों के दौरान में, मैं मुख्यतः प्रेसीडेंट आइजनहावर से मिलने के लिये, अमेरिका जा रहा हूं। मैं इसकी उत्कंठा से प्रतीक्षा कर रहा हूं, न केवल इसलिये कि अमेरिका एक महान और शक्तिशाली देश है, किन्तु इसलिये कि प्रेसीडेंट आइजनहावर एक महान् व्यक्ति हैं जिन्होंने प्रत्येक संकट की स्थिति के समय अपना प्रभाव व्यवहृत किया है तथा शान्ति स्थापना की है। मुझे विश्वास है कि उनसे मिलना मेरे लिये लाभदायक सिद्ध होगा।

फिर, लगभग दस दिन में हमारे एक महान् पड़ोसी राष्ट्र के प्रधान मंत्री और एक अत्यन्त महत्वपूर्ण और योग्य व्यक्ति, श्री चाऊ-एन-लाई इस देश में आ रहे हैं। इस सबसे प्रकट होता है कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में हमारी कार्य-पद्धति क्या है। हम स्पष्ट तरीके से और मैत्रीपूर्ण ढंग से अमेरिका के नेता से मिलते हैं। और उसी प्रकार हम नवीन चीन के एक अत्यन्त विख्यात व्यक्ति से मिलते हैं। तो एक प्रकार, कुछ सीमा तक, हम ऐसे लोगो के मध्य जो अलग हो गये हैं और अन्यथा मिलते नहीं हैं, एक कड़ी का काम करते हैं। हम यह सेवा प्रदान कर सकते हैं, इसलिये नहीं कि हम किसी और से अच्छे हैं, वरन् केवल इसलिये कि परिस्थितिबों ने और हमारी नीति ने हमें ऐसी स्थिति में विद्यमान किया है।

सदन को विदित है कि गत अनेक वर्षों से चीन को संयुक्त राष्ट्र संघ से पृथक् रखे जाने पर हमने खेद प्रकट किया है। यह हमने केवल इसलिये नहीं किया कि हमारी दृष्टि में यह सही था वरन् इसलिये भी कि ऐसा न करना हमें विश्व भर के लिये हानिकारक प्रतीत हुआ, चीन से भी अधिक शेष विश्व के लिये। और जितना ही समय चीन को अलग रखा जायगा उतना ही चीन की अपेक्षा विश्व के लिये अधिक हानिकर होगा। उस दिन हमने इस मामले को फिर संयुक्त राष्ट्र संघ में रखा तथा कोई दूसरा संकल्प पास किया गया, यद्यपि मेरा ख्याल है कि इस बात पर एक प्रकार का विवाद उठ खड़ा हुआ है कि यह नियमित रूप से या पर्याप्त मतों से पास किया गया था या नहीं। किन्तु संयुक्त राष्ट्र संघ में हम नियमित रूप से ऐसा कर सकते हैं और लोग यह समझ सकते हैं कि महज़ औपचारिक रूप से हम ऐसा कर रहे हैं। किन्तु यह वास्तव में उससे कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। हम इस मामले को विश्व शान्ति के लिये बड़े महत्व का समझते हैं। हम इस स्थिति को संयुक्त राष्ट्र संघ तथा अन्य देशों के लिये हानिकर समझते हैं। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मेरा विश्वास है कि यदि चीन संयुक्त राष्ट्र संघ में होता तो सुदूर पूर्व की अनेक कठिनाइयां पैदा ही नहीं हुई होतीं। और यदि चीन वहां नहीं होगा, तो सम्भव है कि बहुत से झगड़े वहां उठते रहें। मैं इस बात पर जोर देना चाहता हूं।

इस संकल्प पर तीन संशोधन प्रस्तुत किये गये हैं। श्री कामत के संशोधन का मैं जिक्र कर चुका हूं। श्री देशपांडे के शेष दोनों संशोधनों को पढ़ने से ही किसी भी व्यक्ति की प्रकट ही जायेगा कि वह इतने हानिकर हैं कि उन्हें छोड़ देना ही अच्छा है। मुझे उनपर कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। फिर एक वैकल्पिक प्रस्ताव है जिसमें महज़ हमारी नीति की प्रशंसा की गयी है। इस सम्बन्ध में मेरे लिये और कुछ कहना रह नहीं जाता है।

अध्यक्ष महोदय द्वारा श्री कामत का संशोधन मतदान के लिये रखा गया तथा अस्वीकृत हुआ

अध्यक्ष महोदय द्वारा श्री वि० घ० देशपांडे के संशोधन संख्या ३ और ४ मतदान के लिये रखे गये तथा अस्वीकृत हुए